GRT

GOLDEN RESEARCH THOUGHTS

ISSN: 2231-5063
IMPACT FACTOR : 4.6052 (UIF)
VOLUME - 6 | ISSUE - 7 | JANUARY – 2017

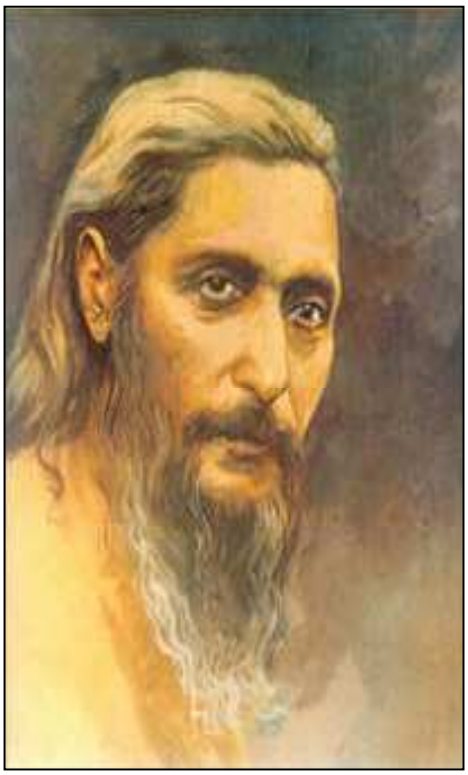

सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला' के उपन्यासों में नारी समस्या का स्वरूप विवेचन

पिंकी जोशी[1] , डॉ. आद्या[2]

[1]शोध छात्रा, हिन्दी विभाग, वनस्थली विद्यापीठ (राज.)

[2]एसोसिएट प्रोफ़ेसर, हिन्दी विभाग, वनस्थली विद्यापीठ (राज.)

सारांश

साहित्यकार अपनी युगीन स्थितियों को देखता है, युग की समस्याओं से परिचय प्राप्त करता है और उनके समाधान के निष्कर्ष निकालता है। सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला' के उपन्यास-साहित्य में उनके जीवन की अनुभूतियां बड़े ही सुन्दर रूप में चित्रित हुई हैं । समाज के विविध रूप उनकी दृष्टि के सामने आये और उन्होंने समाज के तीखे, मधुर रूपों को देखा किन्तु उनके जीवन में तीखी अनुभूतियां ही सबल रही। उनके अपने युग में जो सुधार-आन्दोलन, समाज में सुधार लाने के लिए चल रहे थे, उनका प्रभाव उनके साहित्य में परिलक्षित होता है। उस समय नारी समस्या प्रमुख थी, नारी अनेक बेड़ियों में जकड़ी हुई थी, अनेक समाज सुधारक उसे मुक्त कराने के कार्य में लगे थे। निराला जी ने अपने उपन्यासों में विधवा समस्या, वेश्या समस्या, अन्तर्जातीय विवाह के प्रति उचित दृष्टिकोण का न होना, नारी को शिक्षा प्राप्ति व स्वतंत्रता का अधिकार न मिलना जैसी नारी की विविध समस्याओं को न केवल उठाया वरन् उनके समाधानों पर भी प्रकाश डाला है। निराला जी ने नारी पात्रों के माध्यम से समाज में नारी वर्ग में चेतना का स्वर भरा और उनके सामने आदर्श प्रस्तुत किया है ।

प्रयुक्त शब्दावली: निराला के उपन्यास, नारी प्रस्थिति, नारी समस्या, स्वरूप विवेचन

पिंकी जोशी

प्रस्तावना

व्यक्ति अपने युग में जीता है और युग की अनुभूतियों को अपने ढंग से अभिव्यक्त करता है। साहित्यकार अपनी युगीन स्थितियों को देखता है, युग की समस्याओं से परिचय प्राप्त करता है और उनके समाधान के निष्कर्ष निकालता है। निराला एक श्रेष्ठ साहित्यकार हैं। निराला के उपन्यास-साहित्य में उनके जीवन की अनुभूतियां बड़े ही सुन्दर रूप में चित्रित हुई हैं । समाज के विविध रूप उनकी दृष्टि के सामने आये और उन्होंने समाज के तीखे, मधुर रूपों को देखा किन्तु उनके जीवन में तीखी अनुभूतियां ही सबल रही। उनके अपने युग में जो सुधार-आन्दोलन, समाज में सुधार लाने के लिए चल रहे थे, उनका प्रभाव उनके साहित्य में परिलक्षित होता है। उस समय नारी

समस्या प्रमुख थी, नारी अनेक बेड़ियों में जकड़ी हुई थी, अनेक समाज सुधारक उसे मुक्त कराने के कार्य में लगे थे। निरालाजी के उपन्यासों में भी नारी की अनेक समस्याओं के समाधान प्रस्तुत किये हैं।

उन्नीसवीं शताब्दी में पर्दा प्रथा की समस्या, अशिक्षा, विधवा समस्या, वेश्या समस्या, दहेज, अनमेल विवाह और बहुपत्नी प्रथा आदि अनेक समस्यायें थी। हमारे समाज-सुधारकों का यह विचार था कि यदि भारतीय समाज का उत्थान करना है, तो नारी-उत्थान के बिना वह संभव नहीं है। नारी माँ है, माँ की शिक्षा के बिना संतान कभी सुयोग्य नहीं बन सकती और सुयोग्य सन्तान के बिना इस देश का उद्धार संभव नहीं है।[1] निराला और उनके समसामयिक लेखकों ने नारी को पूर्ण सहानुभूति और सम्मान प्रदान कर उसकी सभी समस्याओं को अपने उपन्यासों में चित्रित किया है। ये लेखक इन समस्याओं के समाधान के लिए आतुर प्रतीत होते हैं यही आतुरता उन्हें यथार्थ से आदर्शवाद की ओर जाने को मजबूर करती है। निराला के उपन्यासों में विधवा नारी की समस्या, वेश्या की समस्या, अन्तर्जातीय विवाह का सामाजिक अस्वीकृति, नारी की अशिक्षा व पराधीनता जैसी अनेक समस्याओं को उठाते हुए उसका समाधान सुझाने का साहसिक कार्य किया है।

(क) विधवा समस्या के प्रति विचार

भारतीय सामाजिक व्यवस्था में नारी को सामाजिक तथा धार्मिक मान्यताओं के चलते पहले, माता-पिता फिर पति और अन्त में पुत्रों के अधीन रहना पड़ता था। वह कभी भी स्वतंत्र नहीं हो पाती थी। जहाँ सामान्यतः नारी वर्ग के प्रति सामाजिक दृष्टिकोण इतना अनुदार था कि वहां विधवा नारी के प्रति कैसा दृष्टिकोण रहा होगा, यह विचारणीय तथ्य है। समाज में विधवा का जीवन एक तरह से अभिशापित जीवन होता था। उसका उठना-बैठना, खाना-पीना, ओढ़ना-पहनना, सब समाज की नजर में आलोचना की वस्तु थे। सौभाग्यवती स्त्रियां उनकी छाया से भी परहेज रखती थी। ऐसी दशा में सचमुच उनका पति के साथ सती हो जाना आसान था। ये समाधान स्वस्थ समाधान नहीं था, यद्यपि सती प्रथा के प्रचलन में यह समाधान-जनित अर्थ में भले ही शामिल रहा हो। क्योंकि सती हो जाने से कुछ क्षण के लिए असह्य वेदना तो होती थी, लेकिन जिन्दगी भर तिल-तिल कर जलने से यह एक बार का जलना कहीं बेहतर समझा जा सकता था।

तत्कालीन समाज सुधारकों ने सती प्रथा बन्द कराने में जितनी तत्परता दिखाई, उतनी उनके लिए जीवन की सुविधाएं जुटाने के लिए नहीं, तब उनका सामाजिक जीवन भंग होगा।[2] परिणाम यह हुआ कि विधवा नारी, जो पहले पति की चिता में जलकर अपना जीवन समाप्त कर लेती थी, अब समाज के सम्मुख एक जटिल समस्या बनकर उपस्थित हुई।

इस समस्या का समाधान तो पहले भी साहित्यकार पुनर्विवाह से कर सकते थे, लेकिन उस रूढ़िवादी युग में यह संभव नहीं था। इसके बाद प्रेमचन्द युग में (वरदान), (प्रेमाश्रम) तथा (प्रतिज्ञा) में विधवा समस्या का समाधान विधवा आश्रम बताया। जबकि स्वयं प्रेमचन्द ने विधवा नारी से विवाह करके उचित समाधान प्रस्तुत किया।

निराला जी भी विधवा की कारूणिक स्थिति से अत्यन्त क्षुब्ध थे और समाज में उन्हें जीने योग्य सम्मान युक्त स्थान दिलाना चाहते थे। भारत में विधवा का सामाजिक स्तर निम्न होता है और प्रायः वह अत्यन्त असहाय, करूण स्थिति में होती है। प्रायः लोग उसे लांछित ही करते हैं। निराला ने विधवा का अत्यन्त उदात्त चित्र खींचा है। उसके जीवन में हाहाकार है। उसे न तो कोई धैर्य देने वाला है और न उसके दुःखभार को बंटाने वाला है। तथापि, वह दीप-शिखा-सी शांत है और अपने इष्टदेव के मंदिर में पूजा सी है:-

यह इष्टदेव के मन्दिर की पूजा-सी
वह दीप-शिखा-सी शान्त, भाव में लीन,
वह क्रूर काल-ताण्डव की स्मृति रेखा-सी
वह टूटे तरू की घुटी लता-सी दीन
दलित भारत की ही विधवा है।[3]

इस कविता से जहाँ निराला की सहानुभूति और संवेदनशीलता का पता चलता है, वहीं दूसरी और उनकी यथार्थवादी दृष्टि का एक और जहाँ इससे विधवा की दयनीय स्थिति का पता चलता है, वहीं दूसरी ओर उसके प्रति सामाजिक तिरस्कार और निष्ठुरता का।

मनुष्य एक दूसरे को पराधीन बनाने का, सुख भोगने का अभिलाषी है। उसकी इसी अभिलाषा ने एक ओर वर्ण-व्यवस्था को प्रतिष्ठित किया, तो दूसरी ओर उसने नारी को पुरूष का वंशवर्ती बनाकर स्त्रियों की सामाजिक स्थिति को अत्यन्त दयनीय भी बना दिया। उनके साथ जो पाशविक अत्याचार किये जाते हैं, उनका कोई प्रतिकार नहीं होता। वे चुपचाप आंसुओं को पीकर रह जाती हैं। उनका जीवन एक अभिशप्त जीवन बन रहा है।

निराला जी के इस विचार से यह स्पष्ट है कि निराला जी नारी की दीन-हीन दशा का उत्तरदायी पुरूष की पाशविक वृत्ति को ही मानते हैं। उन्होंने स्वालम्बन में असमर्थ, पुरूष की इन दासियों को स्वतन्त्रता का जीवन बिताने की प्रेरणा दी है और उन्हें ज्ञान सम्पन्न करने की आवश्यकता पर बल दिया है। निराला को यह बात उचित नहीं लगती कि पुरूष तो विधुर होकर के दूसरा विवाह कर सकता है। किन्तु स्त्री के लिए यह मार्ग बन्द है।[4]

निराला ने अपने उपन्यास 'अलका' में विधवा स्त्रियों पर जमींदारों के द्वारा किये जाने वाले अत्याचारों को प्रमुखता से स्पष्ट किया है। मुरलीधर इस गांव में जमीदार है, वह किसानों पर अत्याचार करता है, लगान न देने पर, वह क्या-क्या नहीं कर देता है। देहाती रूपसियों की निर्दोषिता साहबों को पसंद आई, इसलिए धीरे-धीरे गांवों पर धावे होने लगे। देहात की सुंदरी विधवाऐं, भ्रष्ट हुई अविवाहित युवतियां एकमात्र माता जिनकी अभिभावक थीं, और अपना खर्च नहीं चला सकती थी, और इस तरह के लब्ध अर्थ से लड़की का धोखे से ब्याह कर देना चाहती थीं। लगान की छूट, माफी आदि पाने की गरज से, कुटनियों के बहकावे में आकर चली जाती या भेज दी जाती थी।[5]

वीणा भी वहाँ अपने भाई के साथ रहती है, वह विधवा युवती है, उसे भी मुरलीधर का हमेशा डर लगा रहता था। इसमें वीणा का भाई अपनी बहिन की दशा पर सोचता है कि (विधवा कितनी असहाय और अनावश्यक इस संसार के लिए है।) वीणा सोचकर, रोकर, आप ही आंचल में आंसू पोंछ लेती है, (क्यों विधवा-जैसी दुखी विधाता की दूसरी भी सृष्टि होगी, जो सखियों में भी खुले प्राणों से बातचीत नहीं कर सकती, भोग सुख वाले संसार के बीच में रहकर भी भोग सुख से जिसे विरत रहना पड़ता है, आंख के रहते भी जिसे चिरकाल तक दृष्टि हीन होकर रहना पड़ता है।)[6]

वीणा भी विधवा है लेकिन उसमें भी सामान्य नारी के सभी भाव हैं, वह कहती है - (गाना चाहती है, यह तान नहीं कि यह विधवा है- उसके उज्वल वस्त्र पर काले छींटे पड़ेंगे।[7] वीणा को स्वामी जी से प्रेम हो जाता है जो मनुष्य की स्वाभाविक क्रिया है, स्वामी से प्रभावित वह इसलिए हो जाती है क्योंकि स्वामीजी उसे पुनः विवाह का मार्ग दिखाते हैं, वह स्वामीजी से प्यार करने लगती है। (स्वामी कोई और नहीं एक नवयुवक है, जो वेश बदलकर गांव में रहता है उसका नाम अजीत होता है।)

अजीत के प्रति वह मन-प्राणों से समर्पित है। विधवा समस्या को इस प्रकार लेखक ने तत्कालीन स्थिति को देखते हुए नयी दिशा प्रदान की है। यह वीणा के साथ परिणय-बद्ध होता है। विधवा के प्रति समाज को कर्त्तव्य की प्रेरणा भी देता है। वीणा की सहायता से मुरलीधर की पिस्तौल उड़ाता है और अन्त में शोभा से उसका अन्त करवाता है।

'अलका' उपन्यास में वीणा के माध्यम से भी विधवा समस्या पर लेखक ने प्रकाश डाला है। युवावस्था में ही विधवा हो जाने पर पुनर्विवाह की अनुमति न मिलना विधवाओं के लिए कितना कारूणिक था, यह वीणा के दैनिक जीवन तथा मनोभिलाषाओं से स्पष्ट हो जाता है उन्होंने कहा, (यदि विधवाओं को पुनर्विवाह का अवसर न मिलता तो वे फूटे हुए बरतन की तरह समाज में रख दी जाती।)[8]

निराला जी विधवाओं को अभिशप्त जीवन से मुक्ति दिलाने के लिए उन्हें शिक्षित करना आवश्यक मानते हैं और हर तरह से उनके जीवन को ऊंचा उठाने का प्रयत्न करते हैं। इस समस्या के विषय में निराला जी के विचार अन्य उपन्यासकारों से अलग हैं। वे समस्या का चित्रण न करके, सहज ढंग से समाधान प्रस्तुत कर देते हैं। अपने उपन्यास 'अलका' में वे आदर्शवादी अजीत की शादी विधवा वीणा से करा देते हैं। वे इस समस्या का एकमात्र समाधान विधवा विवाह मानते हैं। 'अलका' में कमजोर वर्ग अभिजात्य वर्ग की विलासिता के शोषण का शिकार है, लेकिन

यह वर्ग विधवा का तो निर्मम शोषण करता है। निराला जी ने इस अभिजात्य वर्ग पर कठोर प्रहार किये हैं। उन्होंने नारी वर्ग और विशेषकर विधवा को पूर्ण सहानुभूति प्रदान की है।

(ख) वेश्या समस्या के प्रति विचार

वेश्या नारी का जीवन भारतीय समाज में एक अभिशप्त जीवन की सृष्टि करता है। वेश्या-समस्या भारतीय समाज की एक गम्भीर समस्या है, जो अत्यधिक प्राचीन काल से समय-समय पर अपने स्वरूप और उद्भव स्रोत में परिवर्तन के साथ चली आ रही है, लेकिन इसके मूल में प्रायः प्रत्येक काल में आर्थिक आधारहीनता ही रही है। यह कारण उस वक्त और भी मजबूत बन जाता है, जब पति की मृत्यु के बाद विधवा-नारी और एकांकी परिवार की सीमा से निकालकर व्यापक समाज की सीमा में फेंक दी जाती है अथवा निकलने को मजबूर की जाती है। एक अवस्था विशेष के भीतर पीड़ित, प्रताड़ित तथा आर्थिक दृष्टि से जर्जर तथा निराधार नारी इच्छा, अनिच्छा, छल तथा धोखे से इस जीवन को स्वीकार कर लेना कोई बहुत असंगत नहीं लगता, विशेषकर समाज की आधुनिक गतिविधि को देखकर तो और भी नहीं।

इसके अतिरिक्त इसके मूल में अनमेल विवाह की समस्या भी है जो विधवा समस्या से कम किसी भी माने में नहीं है अनमेल विवाह का परिणाम पति-पत्नि के परस्पर विरोध में होता है और विरोध अर्थ का परस्पर अलग हो जाने में है। इस प्रकार की अलग हुई नारी के लिये आर्थिक दृष्टि से कोई दूसरा उपाय शेष नहीं रहने पर अन्ततः वह वेश्या बनना स्वीकार कर लेती है।[9] भारतीय समाज-व्यवस्था में विधवा-प्रथा, दहेज प्रथा, बहुपत्नी प्रथा आदि अनेक सामाजिक कुप्रथाओं में पिसती हुई स्त्री के लिए एकमात्र आर्थिक स्वावलम्बन का उपाय यही शेष बचा था कि वह वेश्या जीवन स्वीकार कर लें। उचित आर्थिक संरक्षण के अभाव तथा अनमेल वैवाहिक सम्बन्धों के कारण उत्पन्न मनोवैज्ञानिक विसंगतियों ने भी स्त्रियों को वेश्या बनने की प्रेरणा प्रदान की। समाज में नारी का सम्पत्ति के अधिकारों से वंचित होना भी इसका एक प्रमुख कारण बना, क्योंकि आर्थिक अधिकारों के अभाव में नारी के लिए जीवन रक्षा का कोई और उपाय नहीं दिखता था। संयुक्त परिवार के विघटन से, जो आर्थिक सुरक्षा अबला नारियों को प्राप्त थी, वह भी समाप्त होती गयी। समाज में एक तरफ से तो इतनी अधिक गरीबी है कि उसमें चारित्रिक दृढ़ता संभव नहीं तथा दूसरी ओर धनी तथा सम्पन्न लोगों का वर्ग है। जहाँ विलासिता की पूर्ति के लिए इन कुत्सित व्यापारों का संगठन होता है।[10]

इसके अतिरिक्त पितृ-प्रधान पारिवारिक व्यवस्था तथा स्त्रियों के लिए शिक्षा की उचित व्यवस्था के अभाव में भारतीय नारी को सदैव घर की चारदीवारी में ही बन्द रखा तथा बाह्य जीवन संघर्ष के लिए वह सदैव अयोग्य ही समझी गई। परिणाम यह हुआ कि वह सचमुच (अबला) बन गई घर की देहरी से बाहर निकलकर वह अपनी रक्षा करने में भी समर्थ नहीं रही। जिस समाज ने नारी को इतनी निरीह बना दिया, वहां वैयक्तिक चारित्रिक हीनता की दुहाई देकर सभी दोष वेश्याओं के सिर थोप कर अलग हो जाना असामाजिक दृष्टिकोण है। ऐसी दशा में आक्रोश की पात्र वेश्या नहीं है वरन् सम्पूर्ण समाज आक्रोश का पात्र है। इस प्रकार जहाँ तक हिन्दी उपन्यास में वेश्या-समस्या के चित्रण का सम्बन्ध है, प्रारम्भिक काल से ही उपन्यासकार इसे एक प्रमुख सामाजिक समस्या के रूप में चित्रित करते आये हैं। लेकिन प्रायः प्रत्येक युग के लेखकों का दृष्टिकोण इस के प्रति एक सा नहीं रहा है। प्रेमचन्द-काल के उपन्यासकार जहाँ समस्या पर सहानुभूतिपूर्ण ढंग से विचार करते हैं तथा उस काल के उपन्यास जहाँ वेश्या-समस्या का व्यावहारिक समाधान उपस्थित करते हैं वहां प्रारम्भिक युग में लेखक वेश्याओं को घृणित ही मानते हैं।[11]

प्रेमचन्द-कालीन उपन्यासकारों ने वेश्या-समस्या को सबसे अधिक प्रमुखता दी है। प्रेमचन्द, चतुरसेन शास्त्री, जयशंकर प्रसाद, विशम्भर नाथ कौशिक, निराला, उग्र इलाचन्द्र जोशी, भगवती प्रसाद वाजपेयी, रांगेय राघव आदि ने अपने उपन्यासों में इस समस्या को चित्रित किया ये सभी लेखक वेश्यावृति को समाज के माथे पर कलंक का टीका समझते हैं और इस घृणित वृत्ति का उन्मूलन चाहते हैं। प्रायः उपन्यासकारों ने वेश्याओं के प्रति सहानुभूति का दृष्टिकोण अपनाया है। ये लेखक अपने उस युग में प्रचलित गाँधीवादी, मानवतावादी विचारधारा से प्रभावित रहे हैं। (पाप से घृणा करो, उसके अधिकारों को मत छीनो और उसकी आत्मा पर छाये कलुष को उससे अलग करके देखो।)[12]

निराला पर उस युग की प्रवृत्तियों की झलक स्पष्ट है, उनके साहित्य में उन्होंने भी वेश्या-समस्या को आधार बनाकर अपना उपन्यास **'अप्सरा'** लिखा। 'अप्सरा में निराला जी ने एक अभिजात कुलीन युवक तथा एक वेश्या पुत्री के प्रेम और विवाह का अंकन किया है। वेश्या समाज की समस्या बीसवीं शताब्दी के आरम्भ से ही हिन्दी उपन्यास का विषय रही और प्रेमचन्द ने सेवासदन में इसे मुकम्मल रूप में प्रस्तुत करने का प्रयास किया। संवेदनशील रचनाकारों में वेश्या शुरूआत मानी जा सकती है जो आज के कथा साहित्य का प्रमुख मुद्दा बना है। प्रेमचन्द की वेश्याओं के प्रति सहानुभूति तो है; पर उन्होंने अपने उपन्यास में किसी वेश्या का विवाह नहीं दिखाया।

निराला ने **'अप्सरा'** में वेश्या पुत्री कनक का विवाह साहित्य के प्रति पूर्णतः समर्पित युवक राजकुमार से चित्रित किया हैं। उल्लेखनीय यह भी है कि इस विवाह के समर्थन में खड़े होने वाले और इसे अंजाम देने वाले कई अन्य पात्र स्त्री-पुरूष दोनों है। यद्यपि इसमें सामाजिक टकराव की स्थितियाँ प्रायः नहीं आ पायी है जो कदाचित् उपन्यास को तनावपूर्ण और वैचारिक समृद्धि से युक्त बनाती; पर इससे कम से कम निराला की एक ज्वलन्त सामाजिक समस्या के प्रति सहानुभूति प्रतिबद्धता तो जाहिर होती ही है।[13]

कनक को अपनी माता से अनेक सुविधाओं के साथ अच्छी शिक्षा मिली, मगर उसका मन उस पेशे की तरफ नहीं गया। जब उसकी माँ को पता चलता है कि ये किसी अन्य पुरूष को प्यार करती है, तो कनक से कहती है – **"**किसी को प्यार मत करना; हमारे लिए प्यार करना आत्मा की कमजोरी है। संसार के लोग भीतर से प्यार करते हैं हम लोग बाहर से। जिस आत्मा को और लोग अपने सर्वस्व का त्याग कर प्राप्त करते हैं; उसे भी हम लोग अपनी कला के उत्कर्ष के द्वारा उसी में प्राप्त करती हैं। उसी में लीन होना हमारी मुक्ति है**"** [14] कनक अपलक ताकती हुई, किन्तु कनक वेश्या पुत्री होने पर भी हृदय रखती है वह समर्पित होना भी जानती है। अपनी माता को वह राजकुमार को वरण करने की सूचना देती है।

वह अपने वेश्यापन से भी घृणा करती है – **"**कला के ज्ञान के साथ कुछ ऐसी गंदगी भी हम लोगों के चरित्र में रहती है, जिससे मुझे सख्त नफरत है।**"**[15] इस प्रकार एक वेश्या पुत्री का आशीर्करण हुआ। निराला जी ने इस उपन्यास के माध्यम से बताया कि वेश्या पुत्री भी हृदय रखती है, और उपयुक्त अवसर मिलने पर पत्नीत्व की मर्यादा के पालन को ही जीवन का चरम लक्ष्य समझती है। राजकुमार को पति मान लेने के पश्चात जब सर्वेश्वरी ने कुँवर साहब की महफिल में गाना गाने के लिए कहा तो कनक कहती है "मैं रईसों की महफिल में गाना नहीं गाऊंगी। कल शकुन्तला के रूप में सजी हुई तुम्हारी कनक का दुष्यन्त का पार्ट करने वाले राजकुमार के साथ कोहिनूर कम्पनी के स्टेज पर विवाह को गया है। ये चूड़ियाँ इसके प्रमाण के लिए मैंने पहनी हैं और यह सिन्दूर की बिन्दी भी।"[16]

तारा के सम्पर्क में आने पर कनक इस कार्य को छोड़ने की प्रतिज्ञा भी करती है और अपनी माँ को "दूसरी जगह पर रहने को कहती है, मकान में यज्ञ कराओं एक दिन गरीबों को भोजन कराओ। मकान में छोटा सा शिवमंदिर बनाकर नियमित रूप से पूजा करो।" निराला ने कनक को अबला नारी के रूप में प्रस्तुत न करके उसे सबल व्यक्तित्व प्रदान किया है। उसमें ईर्ष्या, क्रोध, साहस, सौन्दर्य बोध आदि विविध प्रवृत्तियों से युक्त बताया है, वह वास्तविक अर्थों में आधुनिक नारी का प्रतीत है। लेखक ने उसे बलपूर्वक किसी मार्ग पर नहीं बढ़ाया है, अपितु उसे जीवन-संग्राम में स्वतंत्र छोड़कर तटस्थ भाव से उसकी गतिविधि को अंकित किया है।

कनक के माध्यम से लेखक ने वेश्याओं के सुधार की समस्या को भी उठाया, एकनिष्ठ प्रेम और व्यक्तित्व की गरिमा द्वारा लेखक ने यह संकेत दिया कि वस्तुतः लेखक इस प्रसंग में कुछ आदर्शवादी हो गया है। तत्कालीन जनता में समाज-सुधारक संस्थाओं के कारण कुछ जागृति अवश्य आ रही थी, किन्तु इस सीमा तक नहीं कि युवक वेश्या-पुत्रियों से विवाह करने का साहसपूर्ण कदम उठा सकें। वस्तुतः इस घटना के द्वारा निराला ने तत्कालीन जनजागरण की ओर संकेत करने का प्रयास मात्र किया है, किन्तु वे यथार्थ के प्रति असावधान नहीं थे। इसलिए उन्होंने यह दिखाया है कि कनक को रंगमंच की नर्तकी जानकर राजकुमार का मन एक बार घृणा से भर उठा था और चन्दन की माता तो वेश्याओं को स्पर्श करने और उनसे बातें करने को भी अधर्म समझती थी।[17]

निराला ने वेश्या सम्बन्धी रूढ़िवादी परम्परा के प्रति घोर विरोध प्रदर्शित करते हुए; वेश्याओं की करूण स्थिति का वर्णन एक समाज सुधारक की दृष्टि से किया है साथ ही वेश्या पुत्री कनक का विवाह राजकुमार से कराकर; समुचित समाधान प्रस्तुत करते हुए नवयुवकों में इसके प्रति नवचेतना लाने का भी प्रयास किया है। साथ ही उपन्यास में सामन्ती विलास की ओर संकेत मिलता है, यथा सामन्त वर्ग वेश्याओं को अपने

भोग-विलास की वस्तु मानता था, और उनके लिए यह कार्य अनुचित भी नहीं माना जाता था, क्योंकि वे उच्च वर्ग से सम्बन्ध रखते थे, लेकिन उसी वेश्या को ऐसी कोई स्वतंत्रता या सुख प्राप्त नहीं होता था, जो एक सामान्य भारतीय नारी को मिलता। उपन्यास में इस तथ्य को सत्य रूप में उद्घाटित करते हुए, वेश्या पुत्री को उच्च स्थान प्रदान करने का प्रयास किया है। लेखक ने अपनी प्रगतिशील सामाजिक विचार धारा का परिचय प्रस्तुत किया है।

(ग) अन्तर्जातीय विवाह के प्रति विचार

भारतीय सामाजिक संगठन में विवाह व्यवस्था में जितनी विविधता रही है, उतनी और किसी व्यवस्था में नहीं रही है। कभी पहले यहाँ विवाह के अनेकानेक रूप प्रचलित थे, यथा- देव विवाह, राक्षस विवाह, स्वयंवर विवाह, गन्धर्व विवाह आदि। धीरे-धीरे ये सब समाप्त हो गए और विवाह की एक सामान्य पद्धति ही प्रचलित रही है। इस पद्धति के अनुसार लड़के-लड़कियों का विवाह उनके माँ-बाप की अनुमति से होता है। यह पद्धति किसी न किसी रूप में आज भी प्रचलित है। जिस प्रकार नारी अन्य मामलों में पराधीन थी। उसी प्रकार वह वैवाहिक मामले में भी पराधीन ही रही। उसे अपने इच्छानुसार वर चुनने का अधिकार नहीं था।[18]

माता-पिता जिस किसी से भी उसका विवाह-सम्बन्ध स्थापित कर सकते थे। इससे समाज में अनेकानेक वैवाहिक रूप प्रचलित हुए। वैवाहिक रूपों में इस विविधता का कारण बहुत हद तक आर्थिक भी था। विवाह संस्कार में शास्त्रानुसार धन-धान्य से परिपूर्ण लड़की को लड़के के हाथ में दान कर दिया जाता था। इस प्रथा ने एक ओर नारी को दान में दी जाने वाली तुच्छ और निरीह वस्तु के रूप में बदल दिया तो दूसरी ओर दहेज की प्रथा का रूप धारण करके आर्थिक लाचारी में अनमेल विवाह को भी प्रश्रय प्रदान किया, क्योंकि धन-धान्य पहले तो स्वेच्छा से दिया जाता था, लेकिन बाद में यह रूप दहेज-प्रथा के रूप में आर्थिक विवशता बनकर सामने आया, जिससे लड़कियों का विवाह समाज में एक कठिन आर्थिक समस्या बन गया। इन समस्त परिवर्तनों को नारी मौन भाव से स्वीकार करती गई, क्योंकि उसे तो कुछ बोलने की स्वतंत्रता कभी थी ही नहीं।

फलतः समाज में इस वैवाहिक व्यवस्था की विकृतियाँ उभर कर सामने आई और अनमेल, विवाह, बाल-विवाह, वृद्ध-विवाह आदि के रूप में विवाह के विविध विकृत रूप समाज में प्रचलित हुए। इन वैवाहिक विकृतियों ने यथासंभव सामाजिक संगठन को कमजोर तथा जर्जर ही बनाया। विशेषकर नारी वर्ग तो इन विकृतियों का सबसे अधिक शिकार बना। सभी जगह नारी ही कमजोर पड़ती थी, अतः हर तरह के अत्याचार अन्ततः उसी से संबंधित किए जाते थे।[19]

भारतीय नवजागरण काल में नारी की स्थिति में सुधार लाने के व्यापक प्रयत्न किए गए; तत्कालीन समाज-सुधारकों का ध्यान नारी की वैवाहिक समस्या की ओर भी गया तथा लोगों ने विवाह के मामले में नारी को अधिकाधिक मुक्त करने पर जोर दिया, लेकिन हमारे उपन्यास-लेखक इस प्रश्न पर भी सदा की भाँति परम्परावादी ही रहे और सनातनी विवाह-प्रणाली को महत्व देते रहे।

हिन्दी उपन्यासकारों ने विशेषकर प्रेमचन्द युग के उपन्यासकारों ने इस संघर्ष को ही अपना विषय बनाया है और नई पीढ़ी को मूल्यगत विद्रोह को वाणी प्रदान की है। इस युग के प्रायः सभी उपन्यासकार सिद्धान्ततः यह स्वीकार करते देखे जा सकते हैं कि विवाह का आधार वास्तव में प्रेम ही होना चाहिये। इस दृष्टि से लेखकों ने यह कहा कि प्रेम-विवाहों को प्रश्रय दिया जाय और उनके मार्ग में पड़ने वाली बाधाओं का विश्लेषण किया जाय। इससे अतिरिक्त इस काल के अन्य लेखकों में वृन्दावनलाल वर्मा, विश्वम्भरनाथ कौशिक, भगवती प्रसाद, "निराला" तथा जिनेन्द्र ने भी वैवाहिक समस्या को अपने उपन्यासों में उठाया है और अपने-अपने ढंग से उसका समाधान प्रस्तुत किया है।

वैवाहिक स्वतंत्रता के इस सवाल पर "निराला जी" के उपन्यासों में भी विचार किया गया है तथा उसे विद्रोह की भूमिका तक पहुँचाया गया है। "निराला जी" के उपन्यासों का नारी पात्रों के नाम पर नामकरण इस बात को प्रमाणित करता है कि उनकी दृष्टि स्त्रियों की दशा पर अधिक है। निराला साहित्य में व्यक्ति के मुक्त प्रेम की अभिव्यक्ति, उनकी कविताओं में ही नहीं, वरन् उनकी कहानी और उपन्यास तक में सामान्य रूप से मिलती है। उनके प्रारम्भिक दो उपन्यासों- "अलका" और "अप्सरा" में प्रेम की सुधारवादी प्रवृत्तियाँ व्यक्त हुई है। पति-पत्नी का प्रेम तथा वेश्यापुत्री का प्रेम क्रमशः चित्रित हुआ है। किन्तु निराला के प्रौढ़ उपन्यास 'निरूपमा' में प्रखर प्रेम परिलक्षित होता है। निरूपमा को

प्रेम वर्गीय विषमता की दरारें भरने की कोशिश करता है। सुख-सुविधाओं के बीच पली हुई धनी युवती निरूपमा आर्थिक दृष्टि से विपन्न किन्तु बौद्धिक दृष्टि से तेजस्वी युवक कृष्णकुमार की ओर आकर्षित होती है। निरूपमा का अपनी वर्गीय सीमा से बाहर जाकर कृष्ण कुमार से प्रेम करना नारी मुक्ति के आन्दोलन का ही पथ उपस्थित करता है जिसमें वर्ग-संघर्ष की अपेक्षा मानवीय उदारतावाद की भावना अधिक प्रदर्शित की गई है।[20]

परिणामस्वरूप लोगों का ध्यान शिक्षा के प्रचार एवं प्रसार की ओर जाने लगा और इस क्षेत्र में सुधार हेतु नवीन चेतना का उदय हुआ। अन्तर्जातीय विवाह एवं विधवा-विवाह का समर्थन किया जाने लगा। निराला- चिन्तन की सबसे बड़ी विशेषता है व्यक्ति-स्वतंत्रता की रक्षा। वे विवाह के सम्बन्ध में भी स्वतंत्रता के पक्षधर रहे है। इस कारण उन्होंने स्वयं अपनी पुत्री का विवाह भी समस्त रूढ़ि-बन्धनों को तोड़कर किया है। "निरालाजी" विवाह के लिए वैचारिक साम्य अति आवश्यक मानते हैं। पति-पत्नी के मध्य पारस्परिक निष्काम प्रेम विवाह के लिए नितान्त आवश्यक है।[21] निराला के उपन्यासों में विशेष रूप से जाति और धर्म की चार दीवारी से अलग स्वतंत्र विवाह के अनेक उदाहरण मिलते हैं।[22]

निराला जी जातीयता और साम्प्रदायिकता की क्षुद्र-भावना से मुक्त थे। अतः विवाह के क्षेत्र में उन्होंने जातीय मान्यताओं को भी महत्व नहीं दिया। वे मुक्त प्रेम के समर्थक थे। दो हृदय जब प्रेम के संबंध में बँध जाते हैं तब जातीयता, साम्प्रदायिकता आदि की दृष्टि में ही निराला ने अपने साहित्य के प्रेमी-युगलों को सहानुभूति अर्पित की है और उन्हें निष्कलंक प्रेम के मार्ग में सफल दिखाया है। उनके प्रसिद्ध उपन्यास "अप्सरा" में 'गन्धर्व कन्या 'कनक' और कुलीन परिवार में उत्पन्न राजकुमार का प्रेम चित्रित हुआ है और इस प्रेम-भावना की परिजाति उनके विवाह संबंध में दिखाई पड़ती है। यही "निरूपमा" की नायिका नीरू की है। वह बंगाली बाला 'कुमार नामक युवक के प्रति आकृष्ट होती है और समाज की समस्त मान्यताओं को ठुकराकर उससे विवाह बन्धनमें आबद्ध होती है। 'अलका' में वीणा और स्वामी जी के पारस्परिक प्रेम-भाव का परिचय निरालाजी ने दिया है। - "तब वीणा अपने एकमात्र आश्रय स्वामी जी को देखकर उनकी निश्छल सहानुभूति में डूबकर जैसे मन्द-पद-चाप प्रणय से हिलते हृदय के साथ-साथ फिरती हुई स्नेह और सौन्दर्य को अपलक आँखों से देखती रहती है। स्वामी जी को वह क्यों प्यार करती है यह वह नहीं जानती, वह प्यार करती है, किसी से कह नहीं सकती; प्यार न करे ऐसा हो नहीं सकता।"[23]

यह स्वामी जी जो वस्तुतः अजीत नाम का युवक है और अपने मित्र की सहायता के लिए स्वामी का वेश धारण किये हुए है किन्तु उसका और वीणा का प्रणय सम्बन्ध दृढ़तर होता चला गया और अन्ततः उसने वीणा को अपनी पत्नी के आसन पर बैठाकर एक आदर्श की प्रतिष्ठा की। सभी पात्रों के प्रेम-सम्बन्ध में जातीयता का पराभव और कर्त्तव्य का उत्कर्ष दिखाई पड़ता है। इन प्रेम सम्बन्धों की परिणति विवाह में दिखाकर निराला जी ने समाज में आदर्श भाव का सृजन किया है।

प्राचीन काल में नारियाँ माता-पिता द्वारा चुने हुए वर को ही सर्वोतम मानकर मूक भाव से स्वीकार कर लेती थी, किन्तु आधुनिक युग में नारी और पुरूष दोनों के दृष्टिकोण बदल गये और वे विवाह को निजी विषय मानने लगे। 'पद्मा' में पद्मा के पिता के विवाह नहीं करने देने पर आजीवन कौमार्य व्रत धारण करके विवाह को निजी विषय सिद्ध कर देती है कि पुरूर्ष ही में नहीं आधुनिक नारी में भी इतनी चेतना आ गई है कि वह भी विवाह को अपना ऐच्छिक विषय मानती है।[24] अतः निराला का दृष्टिकोण उनके उपन्यासों में साफ झलक रहा है। वे अपने पात्रों के माध्यम से अपने सशक्त विचारों की अभिव्यक्ति प्रस्तुत करते हैं।

व्यक्तिगत स्वतंत्रता के परिणाम स्वरूप आधुनिक काल में अन्तर्जातीय विवाह की प्रवृत्ति भी निरन्तर बढ़ रही है। यद्यपि समाज पूर्णरूप से इस प्रकार के विवाह को मान्यता नहीं दे सकता है किन्तु अधिकांशतः आधुनिक युवक विवाह को निजी विषय मानकर अन्तर्जातीय विवाह में कोई अनौचित्य नहीं देखते। निराला जी ने भी देश के कल्याण के लिए और सामाजिक प्रगति के लिए इन अन्तर्जातीय विवाहों को उचित माना है। स्थिति को स्पष्ट करते हुए उन्होंने कहा है - "संसार की प्रगति से भारत की घनिष्ठता जितनी ही बढ़ेगी, स्वतंत्रता का बाह्य रूप जितना ही विकसित होगा, असवर्ण विवाह का प्रचलन भी उतना ही होता जायेगा।[25] निराला ने नारी को पूरी तरह जड़ता से मुक्त रखा, नारी के रूप और उसकी प्रणय भावना को निराला जी अत्यन्त पवित्र मानते हैं। वस्तुतः निराला अपने समय के उपन्यासकारों के विचारों की दृष्टि से आगे निकल जाते हैं।

(घ) नारी शिक्षा व स्वतंत्रता के प्रति विचार

निराला जी स्वभावतः साहित्य में स्त्रियों के योगदान के प्रति बड़े सजग थे। वे हर प्रकार से उन्हें प्रोत्साहन देते थे और साहित्य के पूर्ण विकास के लिए इस योगदान को अत्यन्त आवश्यक मानते थे। नारी की सापेक्षित महत्ता को दृष्टिगत करते हुए निराला ने लिखा है - "अब आवश्यकता है हर एक मनुष्य के पुतले में, चाहे वह पुरूष हो या स्त्री कोमल और कठोर दोनों भावों का विकास हो। दोनों के लिए एक ही धर्म होना चाहिए, अब दोनों के भाव और कार्यों का एक ही में साम्य होना आवश्यक है।"[26]

निराला जी नारी को अनारी समझकर उसका असम्मान नहीं करते और न वे कबीर आदि सन्तों की भाँति उसे उपेक्षणीय ही मानते हैं। उनका विश्वास था कि नारी की उपेक्षा करके पुरूष जीवन-संग्राम में विजय नहीं पा सकता। वह सृष्टि की मूल प्रेरक शक्ति है, सीता के रूप में भी और शक्ति के रूप में भी वही पुरूष को संघर्ष की ओर प्रेरित करती है। निराला जी के समय में नारी उत्थान की एक चेतना फैली थी। ब्रह्म, आर्य समाज जैसी संस्थायें एवं विवेकानन्द, रामकृष्ण परमहंस, महात्मा गाँधी और रवीन्द्र आदि विचारकों ने स्त्री संबंधी समस्त रूढ़ियों एवं अन्धविश्वासों को तोड़ने का अद्‌भुत कार्य किया था। उन्होंने नारी की स्वाधीनता को प्रधानता दी। उनका विचार था कि नारी स्वयं समर्थ है, वह पुरूष के सहारे के बिना भी रह सकती है।[27]

निराला ने अपने साहित्य में नारी को स्वतंत्रता दी है, वे कहते हैं कि स्त्रियाँ अपने निर्वासन से बाहर आयें और सामाजिक दायित्वों को बिना किसी भय या आशंका के निभायें, इस हेतु निराला ने उचित शिक्षा-दीक्षा को अनिवार्य माना है। इस विषय पर खेद प्रकट किया कि ग्रामीण क्षेत्रों में इस तरह की कोई सुविधा नहीं है। "निराला का व्यावहारिक सुझाव था - "हर एक गाँव से जितनी भीख निकलती है, यदि उतना अन्न रोज एकत्र कर लिया जाए तो गाँव में ही एक छोटी-सी पाठशाला खोली जा सकती है। एक शिक्षक का गुजर उससे हो जायेगा। अविद्या का जो यह प्रबल मोह फैला हुआ है, यह न रह जाएगा। बालिकाओं के लिखने पढ़ने का गाँव में ही प्रबन्ध हो सकता है।"[28]

शिक्षा को उन्होंने अपने उपन्यासों में भी महत्व दिया। उनकी हर नायिका को शिक्षित बनाकर शिक्षा का महत्व बताया है। शिक्षा के अभाव में समाज के भीतर अनेक कुरीतियाँ प्रचलित थीं जिनसे सर्वाधिक हानि स्त्रियों की होती थी। पर्दा-प्रथा, बाल विवाह आदि ऐसी ही कुरीतियाँ थीं। निराला ने अन्य हिन्दी साहित्यकारों की तरह इनका विरोध किया। उससे आगे बढ़कर उन्होंने इस बात पर ज़ोर दिया कि स्त्रियों में बौद्धिक विकास की क्षमता वैसी ही है, जैसी पुरुषों में। कुरीतियाँ दूर करना ही काफी नहीं है। स्त्रियों में शिक्षा का प्रचार आवश्यक है, जिससे वे ज्ञान के क्षेत्र में पुरुषों के साथ काम कर सकें।

निराला स्वामी दयानन्द और आर्य समाज के प्रशंसक थे क्योंकि उनके प्रयत्न से स्त्रियों में शिक्षा-प्रचार हुआ था। उन्हें इस बात से विशेष प्रसन्नता थी कि स्त्री समाज को उठाने वाले पश्चिमी शिक्षा प्राप्त पुरुषों से वह बहुत आगे बढ़े हुए हैं; और वह संसार और मुक्ति दोनों प्रसंगों में पुरुषों के ही बराबर नारियों को अधिकार देते हैं।[29] नारी जाति के स्वतंत्रता छीनने और उसे घर की चारदीवारी में कैद करने के निराला विरोधी थे। वे चाहते थे कि स्त्रियाँ पूरी तरह मुक्त हों और उन पर किसी प्रकार अनुचित नियंत्रण न हो। उचित शिक्षा के माध्यम से उनमें सही विवेक पैदा किया जाय। बदली हुई परिस्थिति के अनुरूप नारी के रूप में परिवर्तन आना जरूरी है। अब घर के कोने में समाज तथा धर्म की साधना नहीं हो सकती। जमाने ने रूख बदल दिया है।

निराला ने पर्दा प्रथा का भी घोर विरोध किया है, आज तक जितने अत्याचार, बलात्कार आदि हुए हैं, वे सब पर्दानशीन स्त्रियों पर हुए हैं। पर्दे के भीतर जितनी तीव्रता से दृष्टि प्रवेश करना चाहती है, खुले मुख पर उतनी तीव्रता से दृष्टि आक्रमण नहीं करती। पाशविक प्रवृत्तियाँ अंधकार में ही प्रबल वेग धारण करती है। प्रकाश को देखकर वे दब जाती हैं, उनमें साहस नहीं होता। इसलिए स्त्रियों को हर बात में प्रकाश के सम्मुखीन रहना चाहिए।"[30]

निराला ने स्त्रियों के स्वावलम्बन पर बहुत अधिक बल दिया है। वे चाहते हैं कि वे पुरुषों के साथ मिलकर पूरी जिम्मेदारी निभाएँ। निराला क्रांतिकारी साहित्यकार थे; नवयुवकों को एक स्वप्न दे गए - ग्रामीण स्त्रियों में शिक्षा-प्रसार के बिना सामाजिक क्रांति पूरी न होगी। स्त्रियों की स्वाधीनता के लिए सामाजिक क्रांति आवश्यक है। निराला विभिन्न सन्दर्भों में क्रांति की चर्चा करते हैं। वास्तव में यह सब अनेक क्रांतियाँ न होकर एक ही क्रांति के विभिन्न स्तर हैं। यदि स्त्रियों में शिक्षा-प्रसार की समस्या शहरी उच्च या मध्यवर्ग के महिला-समाज तक सीमित

थी। किन्तु अधिकांश स्त्रियाँ गाँवों में रहती थी; निराला के अनुसार इनमें शिक्षा-प्रसार के बिना भारतीय महिला समाज शिक्षित न कहला सकता था।[31]

निराला ने अपने उपन्यास 'अप्सरा' और 'अलका' की नारी पात्रों में कनक को न केवल शिक्षित बताया वरन् पर्याप्त स्वतंत्रता भी प्रदान की। वह अपने अधिकारों को जानती है, वह तारा के गाँव जाती है वहाँ की ग्रामीण महिलायें उसे देखकर आश्चर्य करती हैं कि यह अकेली घूमती है। चन्दन की भाभी तारा को भी शहर में अंग्रेजी शिक्षा प्राप्त की हुई बताया। वह गाँवों में अध्यापन का कार्य भी करती है।

'अलका' उपन्यास में अलका भी उसके माँ बाप के निधन के पश्चात् अकेली हो जाती है तथा उसका पति भी उसे लेने नहीं आ पाता तो वह अबला की तरह जीवन यापन नहीं करती वरन् गाँव छोड़ कर चली जाती है और धर्म पिता की स्नेह छाया में शिक्षादि ग्रहण करती है। वहीं अलका प्रभाकर से मिलती है, प्रभाकर उसके मौलिक और दृढ़ विचारों से अत्यधिक प्रभावित होता है और दोनों में दोस्ती हो जाती है। प्रभाकर की प्रेरणा में अलका रात्रि पाठशाला में पढ़ाने का कार्य करती है। निराला ने अपने नारी पात्रों को कमजोर नहीं बताया और पुरूष के बराबर का दर्जा भी दिया है। नवयुवकों के माध्यम से नारी को उच्च समाज में स्थान दिलवाया।

अलका का चरित्र पुरूषोचित अधिक है। उसका गाँव से अकेले ही भाग जाना और पिस्तौल द्वारा मुरलीधर की निःसंकोच हत्या करना उसके साहसी और निर्भय व्यक्तित्व का परिचायक है। निराला के उपन्यासों की नारियाँ पुरुषों से अधिक सबल और बुद्धिमती है। वस्तुतः इस युग में यह धारणा प्रबल हो रही थी कि स्त्रियों को अबला कहना मूर्खता है, कहीं-कहीं तो वे पुरुषों से भी श्रेष्ठ है। प्रभावती उपन्यास में प्रभावती; यमुना, सिन्धु और संयोगिता भी पुरुषों की अपेक्षा परिस्थिति का सामना अधिक वीरता और दृढ़ता से करती है। वे शत्रु को कूटनीति और शस्त्र-विद्या से परास्त करने की क्षमता रखती है। निराला के उपन्यास में एक आदर्श पात्र अवश्य होता है जिसके माध्यम से वे अपने आदर्शों और विचारधाराओं को अभिव्यक्त करते हैं। इस उपन्यास में यमुना का व्यक्तित्व सभी के लिए अनुकरणीय है। देश की दुर्दशा, क्षत्रियों के दम्भ उनके पारस्परिक वैमनस्य आदि के सम्बन्ध में अपने विचारों को लेखक ने यमुना के वाक्यों के द्वारा ही स्पष्ट किया है। अतः निराला जी के उपन्यासों के सभी नारी पात्रों की शिक्षा और स्वतंत्रता अपने अधिकारों के प्रति देखने को मिलती है। निराला ने नारी पात्रों के माध्यम से समाज में नारी वर्ग में चेतना का स्वर भरा और उनके सामने आदर्श प्रस्तुत किया है ।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. आप्टे, प्रभा **(1982).** भारतीय समाज में नारी, मैकमिलन इण्डिया लिमिटेड, नई दिल्ली, **216.**
2. आप्टे, प्रभा **(1982).** भारतीय समाज में नारी, मैकमिलन इण्डिया लिमिटेड, नई दिल्ली, **213**
3. निराला, सूर्यकान्त त्रिपाठी **(1921).** परिमल, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, **98.**
4. कथा शिल्पी निराला/डॉ. बलदेव प्रसाद मेहरोत्रा, लोक भारती प्रकाशन, इलाहाबाद, **9.**
5. निराला, सूर्यकान्त त्रिपाठी **(1935).** अलका, गंगा पुस्तक माला, लखनऊ, **20.**
6. निराला, सूर्यकान्त त्रिपाठी **(1935).** अलका, गंगा पुस्तक माला, लखनऊ,**103.**
7. निराला, सूर्यकान्त त्रिपाठी **(1935).** अलका, गंगा पुस्तक माला, लखनऊ,**103.**
8. निराला, सूर्यकान्त त्रिपाठी **(1934).** लिली, गंगा पुस्तक माला, लखनऊ , **28.**
9. आप्टे, प्रभा **(1982).** भारतीय समाज में नारी, मैकमिलन इण्डिया लिमिटेड,नई दिल्ली, **225.**
10. आप्टे, प्रभा **(1982).** भारतीय समाज में नारी, मैकमिलन इण्डिया लिमिटेड,नई दिल्ली, **149.**
11. नगेन्द्र **(1934).** हिन्दी साहित्य का इतिहास, मयूर पेपरबैक्स, नोएडा, **575.**
12. सिंह, कुँवरपाल **(1976).** हिन्दी उपन्यास सामाजिक चेतना/ पाण्डुलिपि प्रकाशन, **37.**
13. नगेन्द्र **(1934).** हिन्दी साहित्य का इतिहास, मयूर पेपरबैक्स, नोएडा, **152.**
14. निराला, सूर्यकान्त त्रिपाठी **(1931).** अप्सरा, गंगा ग्रंथागार, लखनऊ, **31.**
15. निराला, सूर्यकान्त त्रिपाठी **(1931).** अप्सरा, गंगा ग्रंथागार, लखनऊ, **3.**

16. निराला, सूर्यकान्त त्रिपाठी **(1931).** अप्सरा, गंगा ग्रंथागार, लखनऊ, **40.**
17. जिन्दल, निर्मल **(1971).** निराला गद्य-साहित्य, आर्य बुक डिपो, नई दिल्ली, **70.**
18. गुप्ता, मोती लाल **(1997).** भारत में समाज, राजस्थान हिंदी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर, **200.**
19. निराला, सूर्यकान्त त्रिपाठी **(1931).** अप्सरा, गंगा ग्रंथागार, लखनऊ, **20.**
20. श्रीवास्तव, श्रीमती विनोदिनी **(1998).** निराला साहित्य में जीवन-दर्शन, सुलभ प्रकाशन, **101.**
21. निराला, सूर्यकान्त त्रिपाठी **(1931).** अप्सरा, गंगा ग्रंथागार, लखनऊ, **20.**
22. निराला, सूर्यकान्त त्रिपाठी **(1936).** निरूपमा, भारती भंडार, प्रयाग, **35.**
23. निराला, सूर्यकान्त त्रिपाठी **(1935).** अलका, गंगा पुस्तक माला, लखनऊ, **65.**
24. निराला, सूर्यकान्त त्रिपाठी **(1934).** लिली, गंगा पुस्तक माला, लखनऊ , **14.**
25. निराला, सूर्यकान्त त्रिपाठी **(1940).** प्रबन्ध प्रतिमा, भारती भंडार, प्रयाग, **180.**
26. निराला, सूर्यकान्त त्रिपाठी **(1940).** प्रबन्ध प्रतिमा, भारती भंडार, प्रयाग, **130.**
27. शर्मा, रामविलास **(1969).** निराला की साहित्य साधना, राज प्रकाशन, नई दिल्ली, **35.**
28. निराला, सूर्यकान्त त्रिपाठी **(1940).** प्रबन्ध प्रतिमा, भारती भंडार, प्रयाग, **90.**
29. शर्मा, रामविलास **(1969).** निराला की साहित्य साधना, राज प्रकाशन, नई दिल्ली, **35.**
30. निराला, सूर्यकान्त त्रिपाठी **(1940).** प्रबन्ध प्रतिमा, भारती भंडार, प्रयाग, **9.**
31. शर्मा, रामविलास **(1969).** निराला की साहित्य साधना, राज प्रकाशन, नई दिल्ली, **43.**

डॉ. आद्या
एसोसिएट प्रोफ़ेसर, हिन्दी विभाग, वनस्थली विद्यापीठ (राज.)